

भारतीय और पश्चिमी दार्शनिक दृष्टिकोण से मन की धारणा का अध्ययन

Santosh Prajapati^{1*}, Dr. Mahesh Kumar Nigam²

¹ Research Scholar, Shri Krishna University, Chhatarpur, M.P. India

Email: santoshprajapati101@gmail.com

² Associate Professor, Shri Krishna University, Chhatarpur, M.P. India

सारांश- मन का विश्लेषण और समझ पूर्व और पश्चिम में अलग-अलग तरीके से की गई है। प्रस्तावित अध्ययन मन पर प्राच्य दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करता है, जो जांच को मुख्य उपनिषदों तक सीमित रखता है। एक छात्र जो मन से संबंधित चिंतन को समझने का प्रयास करता है, उसे मन के पश्चिमी सिद्धांतों पर चर्चा करने वाला बहुत सारा दार्शनिक साहित्य मिलता है। शैक्षणिक क्षेत्र में पश्चिमी सिद्धांतों की उपलब्धता और सक्रिय उपस्थिति स्वाभाविक रूप से अधिकांश विद्वानों को गलत तरीके से सोचने पर मजबूर करती है कि भारत में मन पर अध्ययन बहुत गंभीरता से नहीं किया जाता है। यह स्थिति भारतीय दार्शनिक साहित्य में मन पर चर्चाओं की जांच करने के लिए एक प्रेरणा बन जाती है। भारतीय दार्शनिक प्रणालियों में मन अद्वितीय है, हालांकि इसे विभिन्न तरीकों से समझा जाता है। मन पर प्राच्य और पाश्चात्य अध्ययनों के बीच मौलिक और गंभीर ज्ञानमीमांसा संबंधी अंतरों का पता लगाया जा सकता है। भारतीय दर्शन के विभिन्न विद्यालयों में मन की अवधारणा के कई रंग हैं।

खोजशब्द- मन, भारतीय, पश्चिमी, वेद, उपनिषद, विद्यालय, योग

-----X-----

परिचय

मन सभी समय के महानतम रहस्यों में से एक है। मानव जाति के इतिहास में मन की प्रकृति और उसके काम करने का तरीका हमेशा चिंता का विषय रहा है। मन की अनंत संभावनाओं का पता लगाने की पद्धतियों की खोज मनुष्य के आदिम जनजातीय जीवन से की जा सकती है। मन की गुप्त शक्तियों में विश्वास मनुष्य के प्रारंभिक सामाजिक जीवन में भी मौजूद था और इस प्रकार मन से संबंधित जांच मनुष्य को, या मनुष्य को उस रूप में समझने में काफी मदद करेगी। पूर्व और पश्चिम में मन का विभिन्न प्रकार से विश्लेषण और समझा गया है। प्रस्तावित अध्ययन मन पर प्राच्य दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करता है जो जांच को प्रधान उपनिषदों तक सीमित रखता है। एक छात्र जो मन से संबंधित प्रतिबिंबों को समझने का प्रयास करता है उसे बहुत सारे दार्शनिक साहित्य मिलते हैं जो मन के पश्चिमी सिद्धांतों पर चर्चा करते हैं। शैक्षणिक क्षेत्र में पश्चिमी सिद्धांतों की उपलब्धता और सक्रिय उपस्थिति स्वाभाविक रूप से अधिकांश विद्वानों को यह गलत सोचने पर मजबूर कर देती है कि, भारत में मन पर अध्ययन अधिक गंभीरता से नहीं किया जाता है। यह स्थिति भारतीय दार्शनिक साहित्य में मन के विमर्श की पड़ताल करने की प्रेरणा बनती है।

भारतीय दर्शन में मन

(i) वेद

वेदों में मुख्य जोर मंत्रों के पाठ, प्रार्थना और कई देवताओं को प्रसन्न करने के लिए अनुष्ठान करने पर है। मन की कोई स्पष्ट धारणा नहीं है और इसे लगभग चेतना के पर्याय के रूप में उपयोग किया जाता है। मन की अवधारणा को जागरूकता (संजना), समझ (अजनानम), समझ (विज्ञान), अंतर्दृष्टि (द्रष्टि), संकल्प (धृतिः), प्रतिबिंब (मानस), आवेग (जुट), इच्छा (संकल्प) जैसे कई शब्दों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।¹ ब्राह्मण साहित्य से उपनिषदों तक संक्रमण संस्कारों और अनुष्ठानों से ज्ञान और ध्यान तक, विश्वास से तर्क तक और निष्पक्षता से व्यक्तिपरकता तक मूल्यों के संचरण की विशेषता है। इसके बाद, बाद के भारतीय दार्शनिक विचार में मन की धारणा दार्शनिक संवाद के केंद्र में लाया गया है।

(ii) उपनिषद

उपनिषदों में मन के लिए प्रयुक्त शब्द हैं मनस, प्रज्ञा, संकल्प और चित्त। मन का सार चेतना नहीं है बल्कि यह पदार्थ का एक सूक्ष्म रूप है और शरीर की तरह यह भी

¹ शशि बाला, मैन: बीइंग एंड मीनिंग, पी. 39

पदार्थ से बना है। खाया हुआ भोजन पचने के बाद तीन प्रकार का होता है। सबसे स्थूल भाग मल बन जाता है; मध्य घटक मांस बन जाता है; सूक्ष्म घटक मन बन जाता है।² पहले के उपनिषदों में, मानसिक कार्यों का कोई अलग वर्गीकरण नहीं दिया गया है, लेकिन पिंगला उपनिषद में, मानसिक कार्यों के पदानुक्रम को पांच इंद्रियों और पांच मोटर अंगों के रूप में व्यक्त किया गया है; बोधशील मन (मानस), जो बोध के अंगों का समन्वय करता है; बुद्धि (बुद्धि) विचार का उच्च अंग है जो आत्म-अहंकार (अहंकार) में भेदभाव करता है; अवचेतन मन (चित्त), अतीत के संस्कारों का भण्डार।³

(iii) भारतीय दर्शनशास्त्र के विद्यालय

भारतीय दर्शन की प्रणालियों को दो व्यापक वर्गों में विभाजित किया गया है, अर्थात् रूढ़िवादी (वैदिक) और हेट्रोडॉक्स (गैर-वैदिक)। रूढ़िवाद के अंतर्गत छह विद्यालय हैं, न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदांत। हेट्रोडॉक्स के अंतर्गत, चार्वाक, बौद्ध धर्म और जैन धर्म नामक तीन स्कूल हैं।

गौतम और कणाद द्वारा स्थापित न्याय और वैशेषिक विद्यालय, हालांकि अपने मूल और प्रारंभिक विकास में विविध थे, बाद में एक समन्वित विद्यालय में समामेलित हो गए, जिसे न्याय-वैशेषिक प्रणाली के नाम से जाना जाता है। न्याय मुख्य रूप से सही सोच की स्थितियों और वास्तविकता का सच्चा ज्ञान प्राप्त करने के साधनों से संबंधित है; और वैशेषिक प्रणाली सात पदार्थों (पादार्थ) अर्थात् द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विसेसा, समवाय और अभाव के आधार पर अपनी औपचारिक संरचना तैयार करती है।

सांख्य द्वैतवादी यथार्थवाद का दर्शन है, जिसका श्रेय ऋषि कपिला को जाता है। यह दो परम वास्तविकताओं अर्थात् पुरुष और प्रकृति को स्वीकार करता है, जो अपने अस्तित्व के संबंध में एक दूसरे से स्वतंत्र हैं। पुरुष चेतन, निष्क्रिय और अपरिवर्तनीय है जबकि प्रकृति अचेतन, सक्रिय और परिवर्तनशील है। अलग-अलग शरीरों से संबंधित अलग-अलग पुरुष या व्यक्तिगत आत्माएँ हैं। प्रकृति सत्व, रजस और तमस गुणों से बनी है, जो परमाणुओं से भी सूक्ष्म हैं और सभी भौतिक, जैविक और मानसिक संस्थाओं में संशोधित हैं। सांख्य संसार के निर्माता के रूप में ईश्वर की धारणा को अस्वीकार करता है। पतंजलि द्वारा स्थापित योग प्रणाली, सांख्य से निकटता से जुड़ी हुई है। यह अधिकतर सांख्य की ज्ञानमीमांसा और तत्वमीमांसा को स्वीकार करता है, लेकिन ईश्वर के अस्तित्व को भी स्वीकार करता है। इस प्रणाली की

विशेष विशेषता योग का व्यापक उपचार है, जिसमें सभी मानसिक कार्यों की समाप्ति शामिल है।

रूढ़िवादी स्कूल

(i) न्याय स्कूल

न्याय स्कूल के अनुसार, मनुष्य में आत्मा (आत्मा), मानस (मन), इंद्रियाँ (इंद्रियाँ) और शरीर (शरीर) शामिल हैं। इनमें से प्रत्येक का प्रदर्शन करने के लिए एक अलग कार्य है।⁴

• **सरीरा:** यह पांच तत्वों के भौतिक कणों से बना है। यह एक समग्र संरचना है, जो बदल रही है, बढ़ रही है और विघटित होकर अंततः नष्ट हो जाती है। यह ज्ञानेन्द्रियों का आधार है; आत्मा के लिए बाहरी वस्तुओं के संपर्क में आने का एक साधन।

• **इन्द्रियाँ:** ये वस्तुओं के विशिष्ट प्रकार के ज्ञान और विशिष्ट प्रकार की गतिविधियों के लिए विशिष्ट अंग हैं। ये शरीर के विशिष्ट स्थान पर स्थित होते हैं। इंद्रियाँ दो प्रकार की होती हैं- ज्ञानेन्द्रिय (ज्ञान के अंग) और कर्मिन्द्रिय (क्रिया के अंग)। इन इंद्रियों और मोटर अंगों द्वारा की जाने वाली वस्तुएँ और गतिविधियाँ इस प्रकार हैं:

ज्ञानेन्द्रियाँ	गतिविधियाँ
1. स्तोत्र (कान)	सबदा (ध्वनि)
2. त्याक (त्वचा)	स्पर्श (स्पर्श)
3. काक्सू (आंख)	रूपा (रूप)
4. रसना (जीभ)	रस (स्वाद)
5. चरण (नाक)	गंध (गंध)
6. मानस (मन)	अंतर्विषय (आंतरिक भावनाएँ)
कर्मिन्द्रियाँ	गतिविधियाँ
1. पानी (हाथ)	ग्रहण (पकड़ना)
2. पद (पैर)	गमन (आंदोलन)
3. वाक् (वाणी के अंग)	वचन (बोलना)
4. उपस्थ (यौन अंग)	आनंद (आनंद)
5. पयु (गुदा)	विसर्जन (उत्सर्जन) ¹⁶

² छांदोग्य उपनिषद, VII, 5-6.

³ पिंगला उपनिषद, ी, 5-6.

⁴ गौतम, न्याय दर्शन, 1, 2, 11

• **मानस** : यह ज्ञान प्राप्ति का अंग है। यह इंद्रियों की रिपोर्ट प्राप्त करता है और उसे आत्मा तक पहुंचाता है। यह सुख, दुःख आदि की आंतरिक अवस्थाओं को भी पहचानता है। यह आकार में परमाणु है और प्रत्येक शरीर में एक है। यदि मन विशाल होता तो वह एक समय में कई इंद्रियों के संपर्क में आ सकता था। चूँकि यह संभव नहीं है, मन एक परमाणु है।⁵ मानस भी ध्यान का एक अंग है और यह एक समय में एक चीज़ पर तेजी से ध्यान केंद्रित करता है, जिससे विचार या ध्यान की एक धारा उत्पन्न होती है, जो ध्यान का एक निरंतर कार्य प्रतीत होता है या चेतना की धारा।

• **आत्मानः** यह मन, इंद्रियों और शरीर के तंत्र के पीछे वास्तविक ज्ञाता, महसूस करने वाला और अभिनेता है। ये आत्मा के लिए मात्र उपकरण हैं। जबकि मन आकार में अणु (परमाणु) है, आत्मा विभु और नित्य (अंतरिक्ष और समय में असीमित) है। यद्यपि आत्मा जानने, महसूस करने और कार्य करने में सक्षम है, लेकिन वह मन, इंद्रियों और शरीर के साधनों या उपकरणों के बिना ऐसा नहीं कर सकती है।

(ii) वैशेषिक विद्यालय

मनुष्य शरीर, ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ, मनस (मन) और आत्मा (आत्मा) से मिलकर बना है। मन और आत्माएं संख्या में अनंत और अस्तित्व में शाश्वत हैं। सांसारिक अस्तित्व में प्रत्येक आत्मा का मन के साथ संबंध है, जो ज्ञान, भावना और क्रिया के साधन के रूप में कार्य करता है। मन आत्मा को ज्ञानेन्द्रियों से और उनके माध्यम से ज्ञान की वस्तुओं से जोड़ता है। आत्मा कुछ सामान्य और विशिष्ट गुणों वाला एक पदार्थ है। इसके सामान्य गुण (वे गुण जो इसे अन्य पदार्थों के साथ साझा करते हैं) संख्या, विशिष्टता, परिमाण, संयोजन और विच्छेदन हैं। यह मानस के साथ जुड़ा हुआ है और इस संयोजन के कारण यह अनुभूति, सुख और दर्द जैसे कई गुणों का अभ्यास करता है। चेतना आत्मा का एक अनपेक्षित (आवश्यक नहीं) गुण है। इसे मन के साथ सहमति से प्राप्त किया जाता है और यह नींद, ट्रान्स और मोक्ष (मुक्ति की स्थिति) में मौजूद नहीं होता है या कार्य नहीं करता है। आत्मा के स्पष्ट गुण ज्ञान, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, इच्छा, गुण (धर्म), अवगुण (अधर्म) और प्रभाव (संस्कार) हैं। ये गुण इसे अन्य पदार्थों से अलग करते हैं।

• मानस (मन, आंतरिक भाव)

मानस आत्मा में क्या घटित होता है इसका ज्ञान प्राप्त करने का एक उपकरण है। इसलिए, यह वह इंद्रिय है जिसके माध्यम से आंतरिक अवस्थाओं का आत्मनिरीक्षण संभव है

⁵ एस। सी। विद्याभूषण, न्याय दर्शन आ गौतम, प. 270.

और इसलिए इसे आंतरिक इंद्रिय (अंतरिन्द्रिय) कहा जाता है। मन वह माध्यम भी है जिसके माध्यम से बाहरी इंद्रियों के संस्कार आत्मा तक पहुंचते हैं। यह मध्यवर्ती भी है जिसके माध्यम से इच्छा क्रिया के अंगों पर कार्य करती है। अलग-अलग जीवों का मन अलग-अलग होता है। यह आत्मा की तरह नित्य और विभु (अविनाशी और सर्वव्यापी) है। यह परिमाण में परमाणु है परंतु चार प्रकार के भौतिक पदार्थों के परमाणुओं की तरह भौतिक नहीं है। इंद्रियों और आत्मा के बीच माध्यम के रूप में कार्य करने के अलावा मन का कोई अन्य विशेष गुण नहीं है। मन की दो अन्य विशेषताएँ हैं:

- (1) यह एक चीज़ से दूसरी चीज़ पर तुरंत प्रभाव डाल सकता है।
- (2) पुनर्जन्म के लिए शरीर छोड़ते समय यह प्रत्येक आत्मा के साथ जाता है लेकिन मुक्त आत्मा के साथ नहीं जाता है।

अतः वैशेषिक के अनुसार मन एक पदार्थ है। यह विभिन्न गुणों वाले नौ द्रव्यों या पदार्थों में से एक है और इसे आंतरिक अंग माना जाता है और प्रत्येक शरीर में एक होता है। यह अभौतिक, परमाणु, अचेतन और क्रिया या गति में सक्षम है। बाह्य वस्तुओं का बोध मन की सहायता से होता है। अनुभूति, सुख, दुःख, इच्छा, घृणा और इच्छाएँ मन के माध्यम से समझी जाती हैं। मन वह आंतरिक अंग है जिसके माध्यम से आत्मा स्मरण करता है, संदेह करता है और स्वप्न देखता है।⁶

योग विद्यालय

योग मुख्यतः एक मनोवैज्ञानिक दर्शन है। यह उच्चतम अवस्था (समाधि) प्राप्त करने के लिए मानसिक अनुशासन का विज्ञान है। योग का अंतिम उद्देश्य मन और उसके संशोधनों (वृत्तियों) से पूर्ण मुक्ति है। इसलिए, योग में मन का गहन और आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है। मन के चंगुल से मुक्त होने के लिए मन की प्रकृति, संरचना और कार्य को जानना आवश्यक है।⁷ योग दर्शन में मन को चित्त कहा जाता है। चित्त शब्द की उत्पत्ति सीत धातु से हुई है, जिसका अर्थ है 'जानना'। योग प्रणाली में चित्त का प्रयोग संपूर्ण ज्ञान तंत्र के अर्थ में किया जाता है। चित्त के तीन मुख्य पहलू हैं जिनके अलग-अलग कार्य हैं, अर्थात् मानस, अहंकार और बुद्धि।

• **बुद्धि**: यह रोशनी, दृढ़ संकल्प और निश्चितता की क्षमता है। यह सदाचार, वैराग्य और ज्ञान का स्रोत है। यह विचार और कार्य में दृढ़ संकल्प और संकल्प, अवधारणा और सामान्यीकरण के निर्माण और अवधारण के माध्यम से स्वयं

⁶ जे.पी. मैक्कार्थी आत्रेय, ओपी. सिट., पृ.54.

⁷ एस.एन. दासगुप्ता, भारतीय विचार की अन्य प्रणालियों के संबंध में योग दर्शन, पी। 260.

को प्रकट करता है। यह अहंकार, मानस और इंद्रियों की सभी संज्ञानात्मक, स्नेहपूर्ण और स्वैच्छिक प्रक्रियाओं में कार्य करने वाला अंतिम है। जब मन विचार की वस्तुओं को पंजीकृत कर रहा होता है, तो यह बुद्धि ही होती है जो भेदभाव करती है, निर्धारित करती है और पहचानती है।

• **अहमकारा:** 'चित्त' के इस पहलू में व्यक्तिगत चेतना खुद को एक विशेष 'मैं' के रूप में महसूस करती है - अनुभव करती है। यह एक अहंकार सिद्धांत है। यह मानस द्वारा धारण किए गए अनुभवों को अपने ऊपर ले लेता है और इसे निर्धारित करने के लिए बुद्धि को सौंप देता है। यह सभी मनोवैज्ञानिक अनुभवों का सचेतन विषय है।

• **मानस:** यह सभी कार्यों के पीछे निर्देशक शक्ति है। इसमें ध्यान, चयन आदि की क्षमता होती है; यह संवेदनाओं की विविध विविधता को संश्लेषित करता है। यह बोध तो कर सकता है परंतु गर्भ धारण नहीं कर सकता, जैसा कि बुद्धि करती है। ये पहलू समग्र रूप से मन (चित्त) का निर्माण करते हैं। सांख्य और योग को संबद्ध प्रणालियों के रूप में माना जाता है क्योंकि तर्क, ऑन्टोलॉजी, नैतिकता और मनोविज्ञान के संबंध में उनके संबंधित पदों में कोई बुनियादी अंतर नहीं है। जहां तक पुरुष का संबंध है, सांख्य केवल व्यक्तिगत सीमित आत्माओं (जीवात्मानः) को स्वीकार करता है, जबकि योग व्यक्तिगत पुरुषों के अलावा एक दिव्य आत्मा (ईश्वर) के अस्तित्व को भी पहचानता है, जिसका सांख्य में बिल्कुल भी उल्लेख नहीं है।

मीमांसा स्कूल

मनुष्य एक भौतिक शरीर (शरीरा), इंद्रिय अंग (इंद्रिय), मन (मानस), चेतना (ज्ञान) और आत्मा (आत्मान) से बना है। इनमें से प्रत्येक घटक का प्रदर्शन करने के लिए एक अलग कार्य है, जो अपूर्वा के प्रभाव में किया जाता है, जो कि धर्म (पुण्य) और अधर्म (पाप) के पिछले कृत्यों से उत्पन्न एक अदृश्य शक्ति है। भारतीय चिंतन की सभी छह प्रणालियों के अनुसार शरीर और इंद्रियों के कार्य कमोबेश एक जैसे हैं।

मानस (मन): यह एक आंतरिक अंग है जिसके माध्यम से इंद्रियों की आशंका (बाहरी वस्तुओं के बारे में) और खुशी, दर्द, अनुभूति और स्वयं के अन्य गुणों (आंतरिक) का भी अनुभव होता है। मन परमाणु (अणु) आयाम वाला नहीं है जैसा कि न्यायवैशेषिक कहता है। यह गति में भी तेज़ नहीं है। यह सर्वव्यापी (विभु) और गतिहीन (एस्पंदम) है। यह एक अमूर्त पदार्थ है, जो किसी अन्य चीज़ का न तो प्रभाव है और न ही कारण। सर्वव्यापी होते हुए भी यह शरीर द्वारा सीमित है। यह आंतरिक धारणा के अंग के रूप में कार्य करता है। यह स्वयं के साथ मिलकर कार्य करता है, जो सर्वव्यापी भी है।

आत्मा (आत्मा): यह एक शाश्वत, अभौतिक पदार्थ है, जो सर्वव्यापी है। यह शरीर, ज्ञानेन्द्रियों और अनुभूतियों से भिन्न है। यह एक शरीर से दूसरे शरीर में संचारित होता है। यह ज्ञाता (ज्ञाना), सक्रिय एजेंट (कर्ता) और भोक्ता (भोक्ता) है। अनुभूति, सुख, दुख, इच्छा, घृणा, इच्छाएं, प्रभाव, गुण और अवगुण (ज्ञान, सुख, दुख इच्छा, प्रयत्न, रोग, द्वेष, संस्कार, धर्म और अधर्म) आत्मा के संशोधन हैं। यद्यपि आत्मा शाश्वत है, आत्मा के परिवर्तन शाश्वत नहीं हैं। नींद के दौरान, ये मोड नहीं होते हैं। गहरी नींद में कोई अनुभूति नहीं होती। जिसे नींद का आनंद माना जाता है वह केवल दर्द का अभाव है। आत्मा को किसी अन्य माध्यम से नहीं बल्कि स्वयं से ही पहचाना जाता है। यह 'मैं' चेतना की एक वस्तु है, जो इसके नंगे अस्तित्व को संदर्भित करती है।

धारणा: आत्मा मनस के संपर्क में आती है जो आंतरिक अंग है और मन इंद्रियों के संपर्क में आता है और इंद्रियां वास्तविक बाहरी वस्तुओं के उचित संपर्क में आती हैं। मानस द्वारा पर्यवेक्षित बाह्य इंद्रियाँ ध्वनि, स्पर्श, रंग, स्वाद और गंध (शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध) की अनुभूति उत्पन्न करती हैं। मानस स्वयं के गुणों अर्थात् अनुभूति, सुख, दर्द, इच्छा, घृणा और इच्छा (ज्ञान, सुख, दुख, राग, दवेसा, प्रार्थना) की धारणा पैदा करता है।⁸

वेदांत स्कूल

मनुष्य आत्मा से बनी एक मिश्रित संरचना है, जो सभी व्यक्तियों और ब्रह्मांड में समान है। इसे व्यक्ति में आत्मा और ब्रह्मांड में परमात्मा या ब्रह्म कहा जाता है। यह सार्वभौमिक आत्मा प्रत्येक व्यक्ति के शारीरिक तंत्र में परिलक्षित या सीमित होती है और इसे जीव कहा जाता है, जो कुछ समय के लिए अपने लिए एक पहचान और पृथकता मान लेता है। व्यक्ति के शारीरिक तंत्र के साथ-साथ ब्रह्मांड के तंत्र में व्यक्तिगत अज्ञान (अविद्या) शामिल है, जो ब्रह्मांडीय अज्ञान (मूल अविद्या या माया) का एक हिस्सा है। अंतःकरण, आंतरिक अंग (मन) में मन के चार पहलू या भाग शामिल होते हैं: बुद्धि (बुद्धि), अहंकार (अहंकार), चित्त (पिछले छापों का भंडार) और मानस (ध्यान का अंग)।

पंच प्राण (पांच प्राण वायु)

पंच ज्ञानइंद्रिय (ज्ञान के पांच अंग: कान, त्वचा, आंख, जीभ और नाक)।

पंच कर्मिन्द्रियाँ (पाँच कर्मिन्द्रियाँ: मुँह, हाथ, पैर, यौन अंग और उत्सर्जन अंग)।

⁸ एस. राधाकृष्णन, दर्शनशास्त्र का इतिहास, पूर्वी और पश्चिमी, पी. 264.

- स्थूला शरीरा (भौतिक शरीर) भौतिक तत्वों से बना है। मानव व्यक्तित्व के ये घटक तीन शरीरों के रूप में व्यवस्थित हैं: कर्म (कारण), सूक्ष्म (सूक्ष्म) और स्थूल (स्थूल)।
- कर्म शरीरा यह अविद्या (अविद्या की सबसे अच्छी परत) द्वारा गठित है, जिसमें व्यक्ति के व्यक्तित्व ग्रहण करने के बाद से उसके सभी पिछले संस्कार (छाप) शामिल हैं।
- सूक्ष्म शरीरा यह चार गुना मानसिक सिद्धांतों, पांच प्राणों (महत्वपूर्ण वायु), पंचज्ञानिन्द्रिय और पंचकर्मिन्द्रिय द्वारा गठित है।

हेटेरोडॉक्स स्कूल

(i) चार्वाक स्कूल

यह भारतीय दर्शन का एकमात्र भौतिकवादी विद्यालय है। इसके अनुसार मन शरीर का उपोत्पाद है और चेतना मन का अंतिम परिणाम है। मृत्यु के समय शरीर विघटित हो जाता है और मन तथा चेतना भी। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ शरीर का निर्माण करती हैं और शरीर चार तत्वों से बना है। अग्नि, वायु, पृथ्वी और जल। सारा ज्ञान इन्हीं इन्द्रियों से प्राप्त होता है। मन ज्ञान का अंग नहीं है बल्कि यह केवल संवेदनाओं को नियंत्रित करता है, जो बदले में धारणाओं को जन्म देता है। धारणाओं की निरंतरता, मन नामक स्थायी पदार्थ की गलत धारणा को जन्म देती है।

चार्वाक दर्शन के अनुसार जीवन की उत्पत्ति परमाणुओं के मिलने से होती है लेकिन जीवन की उत्पत्ति के पीछे इसका कोई उद्देश्य नहीं है और न ही कोई योजना है। संसार परमाणुओं का एक निरर्थक नृत्य है। मृत्यु का भी कोई अर्थ नहीं है। यह केवल परमाणुओं का विघटन है। इसलिए जन्म पर खुशी मनाने और मृत्यु पर शोक मनाने का कोई कारण नहीं है। बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो सभी तनाव छोड़ देता है और खाता है, पीता है और मौज करता है। चार्वाक ने ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास को नकारा और माना कि इस प्रकार का विश्वास मूर्ख लोगों की कल्पना है। वे कर्म के नियम के साथ-साथ आत्मा की अमरता, पुनर्जन्म और मोक्ष जैसे भारतीय दर्शन के अंतर्निहित सिद्धांतों का भी खंडन करते हैं।

(ii) बौद्ध धर्म

बौद्ध धर्म अनात्मवाद (अस्वयं) के सिद्धांत में विश्वास करता है, जिसके अनुसार शारीरिक या मानसिक क्षेत्र में कुछ भी स्थायी नहीं है। भौतिक या मानसिक संसार में कोई स्थायी, स्थायी या एकात्मक पदार्थ नहीं है। मनुष्य का व्यक्तित्व अनेक समुच्चय का समुच्चय है। यह निरंतर प्रवाह में है, क्रमिक क्षणों में कुछ भी समान नहीं रहता है। इसकी

सामग्री पल-पल बदलती रहती है और यह बहती नदी की तरह जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म से गुजरती है। निरंतरता है लेकिन पहचान नहीं है। मनुष्य का व्यक्तित्व पांच घटकों का समुच्चय है जिन्हें स्कंध कहा जाता है:

- **रूपा:** इसमें इंद्रियों सहित भौतिक शरीर शामिल है।
- **वेदना:** इसमें तीन प्रकार की भावनाओं सुख, दुख और प्राकृतिक भावनाओं का समावेश होता है।
- **समझ:** इसमें वस्तुओं की धारणाएं शामिल हैं, जिनके नाम हैं। इसमें वस्तुओं के बारे में हमारा सारा स्पष्ट ज्ञान शामिल है।
- **संस्कार:** इसमें सभी मानसिक अवस्थाएँ शामिल हैं, जिसमें पिछले अनुभव और स्मृति और सभी प्रकार की सहज गतिविधियाँ और भावनाएँ शामिल हैं।
- **विज्ञान:** इसमें वस्तुओं और आत्म-जागरूकता के बारे में सभी प्रकार की जागरूकता शामिल है।

यद्यपि कोई स्थायी इकाई या स्वयं नहीं है, फिर भी बौद्ध धर्म कर्म के नियम में विश्वास करता है। कार्य-कारण के नियम के साथ-साथ कर्म का नियम भी जीवन को नियंत्रित करता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य करने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन अपने कार्यों के आवश्यक परिणाम भुगतने के लिए बाध्य है। जब मानव व्यक्तित्व में कुछ भी नहीं है जो सहन कर सके तो कर्मों का परिणाम कौन भुगतता है? इसका उत्तर यह है कि यह अनुभवजन्य आत्म है जो एक चरण में कार्य करता है और यह वही निरंतर और विकासशील अनुभवजन्य व्यक्तित्व है जो दूसरे चरण में परिणाम भुगतता है। मरते हुए व्यक्ति का अंतिम मानसिक कार्य समाप्त हो जाता है और वह अपनी कारण ऊर्जा को किसी भ्रूण में जीवन-कोशिका के पहले मानसिक कार्य में स्थानांतरित कर देता है। यह ऐसा है जैसे एक दीपक दूसरे को जलाता है और एक नई लौ शुरू करता है जो लगातार बदलती लपटों की निरंतरता के अलावा और कुछ नहीं है। विलियम जेम्स भी इसी तरह विचारों की निरंतरता में विश्वास करते हैं और प्रत्येक आगामी विचार को पूर्ववर्ती विचार की सभी विरासतें विरासत में मिलती हैं।

कार्य-कारण का नियम संसार के साथ-साथ जीवन में भी लागू होता है। जीवन में कार्य-कारण की बारह जुड़ी हुई श्रृंखला काम कर रही है और इसे अतीत, वर्तमान और भविष्य के जीवन (भाव-चक्र) को कवर करने वाले एक पहिये की तरह चलाती है। जीवन की बारह कड़ियाँ हैं:

- (1) अविद्या (अज्ञान)।
- (2) संस्कार (स्वभाव)।
- (3) विज्ञान (चेतना)।
- (4) नामरूप (मन-शरीर का नाम और रूप)।
- (5) सदायतन (छह इंद्रिय)।
- (6) स्पर्श (संपर्क)।
- (7) वेदना (भावना)।
- (8) तृष्णा (प्यास)।
- (9) उपादान (पकड़ना)।
- (10) भव (बनना)।
- (11) जाति (जन्म)।
- (12) जरामरणा (बुढ़ापा और मृत्यु)।

श्रृंखला की पहली दो कड़ियाँ पिछले जीवन से संबंधित हैं, अगली सात कड़ियाँ वर्तमान जीवन से और अंतिम तीन कड़ियाँ भविष्य के जीवन से संबंधित हैं। प्रो.जे.एन. सिन्हा कार्य-कारण की बारह जुड़ी हुई श्रृंखला को इस प्रकार समझते हैं:

अज्ञान दुःख का मूल कारण है। यह व्यक्तित्व की मिथ्या भावना है। यह स्थायी इकाई के रूप में क्षणिक घटनाओं की एक श्रृंखला की गलत धारणा है। यह स्वभाव उत्पन्न करता है। पिछले जीवन में अज्ञानता के स्वभाव भ्रूण में प्रारंभिक चेतना उत्पन्न करते हैं। यह चेतना एक नया मन-शरीर परिसर उत्पन्न करती है। मन-शरीर परिसर पांच बाहरी इंद्रियों और मन की आंतरिक इंद्रिय का निर्माण करता है। ये संवेदनशील वस्तुओं के साथ इंद्रिय-संपर्क उत्पन्न करते हैं। इंद्रिय-संपर्क से इंद्रिय अनुभव के कारण अनुभूति उत्पन्न होती है। भावना प्यास पैदा करती है और प्यास वस्तुओं को पकड़ना या उनसे चिपकना पैदा करती है। पकड़ लेने से बनना या जन्म लेने की इच्छा पैदा होती है। वर्तमान जीवन में जन्म लेने की इच्छा भावी जीवन में पुनर्जन्म उत्पन्न करती है। पुनर्जन्म से बुढ़ापा और मृत्यु उत्पन्न होती है। जन्म-मृत्यु और पुनर्जन्म का चक्र इसी प्रकार चलता रहता है।⁹

(iii) जैन धर्म

जैन सभी मानसिक गतिविधियों जैसे अनुभूति, स्नेह और संवेदना का श्रेय स्वयं या जीव (आत्मा) को देते हैं। मानस

(दिमाग) का कार्य केवल सीमित है। आत्मा चेतना का स्थायी तत्त्व है। यह कोई भौतिक इकाई नहीं है बल्कि शरीर और मस्तिष्क से भिन्न और स्वतंत्र एक अभौतिक या आध्यात्मिक पदार्थ है। यह सभी मानसिक गतिविधियों का एजेंट है और 'मैं जानता हूँ', 'मैं करता हूँ' और 'मैं महसूस करता हूँ' जैसी सभी गतिविधियों में इसे सीधे 'मैं' के रूप में अनुभव किया जाता है। यह सभी मानसिक गतिविधियों का स्रोत है और चेतना इसका आवश्यक गुण है।

जैन धर्म के अनुसार जीव शब्द का शाब्दिक अर्थ है जो जीवित है। यह उस अचेतन और जड़ पदार्थ (अजीव) से बिल्कुल अलग है, जिससे भौतिक जगत की सभी वस्तुएं बनी हैं। जीव संख्या में अनंत हैं। संभावित रूप से सभी जीव अनंत ज्ञान, अनंत धारणा, अनंत शक्ति और अनंत आनंद में सक्षम हैं। लेकिन जड़, निर्जीव पदार्थ (पुद्गल) से दूषित होने के कारण, जीवों की अंतर्निहित शक्तियाँ अस्पष्ट हो गई हैं। विभिन्न प्रकार के पदार्थों से जुड़े जीव सांसारिक संसार में रहते हैं और संसार के विभिन्न कष्टों से पीड़ित होते हैं और कर्म के नियम के अनुसार बार-बार जन्म और मृत्यु से गुजरते हैं। जीव स्वयं को भौतिक शरीरों के साथ पहचानते हैं और अपने कार्यों को अपने शरीर की प्रकृति और संरचना के अनुसार सीमित और अनुकूलित करते हैं।

ज्ञान के साधन के रूप में शरीर में पांच इंद्रियाँ और एक मन है। प्रत्येक इंद्रिय विशिष्ट वस्तुओं को पहचानती है जबकि मानस सभी इंद्रियों की सभी वस्तुओं को पहचानता है। अतः मन को अन्य इंद्रियों के समान नहीं मानना चाहिए। यह एक आंतरिक उपकरण है, जो आत्मा को सभी इंद्रियों के विषयों और आंतरिक स्थितियों जैसे सुख, दर्द आदि को पहचानने में मदद करता है।

समस्त इंद्रिय बोध एक इंद्रिय और उसकी वस्तु के बीच संपर्क का परिणाम है। सांख्य और वेदांत विद्यालयों के विपरीत, जैन यह नहीं मानते हैं कि मन वस्तुओं को पहचानने के लिए वस्तुओं का रूप लेने के लिए संशोधनों (वृत्ति) के रूप में वस्तुओं की ओर बढ़ता है, बल्कि दूसरी ओर यह मानते हैं कि वस्तुएं स्वयं अंदर आती हैं इंद्रियों से संपर्क करें। मन अपनी वस्तु के सीधे संपर्क में नहीं आता। यह उन वस्तुओं (बाहरी) को पहचानता है, जिन्हें इंद्रियों द्वारा पहले से ही महसूस किया जाता है। इसके अलावा, मन (मन) आंतरिक गतिविधियों और संशोधनों जैसे खुशी, दर्द, प्यार, घृणा, मान्यता आदि को पहचानता है, जो मन द्वारा ही किए जाते हैं। उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि मन और उससे संबंधित प्रश्न भारतीय दर्शन में, विशेषकर सांख्य-योग विचार प्रणाली में, मन को एक केंद्रीय स्थान प्राप्त है। यद्यपि मन अविकसित है और विकास के बाद के चरण में बनता है, फिर भी मनुष्य के जीवन में इसका केंद्रीय स्थान है। यदि मनुष्य को उस स्तर पर पहुंचना है जहां सत्य या अंतिम वास्तविकता का

⁹ जे.एन. सिन्हा, भारतीय दर्शन का इतिहास, खंड 2, पृ. 290.

अनुभव करना है तो इसे समझना और नियंत्रित करना होगा।

पश्चिमी दर्शन में मन

पश्चिमी दर्शन में, मन को विभिन्न विचारधाराओं द्वारा अलग-अलग तरीकों से परिभाषित किया गया है। भौतिकवाद के दर्शन के अनुसार केवल भौतिक पदार्थ का अस्तित्व है और मन पदार्थ का एक स्पिन-ऑफ है। इस दृष्टिकोण को एपिफेनोमेनलिज्म के नाम से जाना जाता है। पदार्थ ही वास्तविक पदार्थ है और मन केवल पदार्थ की एक 'चमक' या छाया है जो कुछ परिस्थितियों में प्रकट होती है। इस प्रकार भौतिकवाद की पाठशाला प्राथमिक वास्तविकता के रूप में मन से छुटकारा दिलाती है। आदर्शवाद का दर्शन मन को एक स्वतंत्र और अभौतिक वास्तविकता के रूप में परिभाषित करता है। इस दृष्टिकोण को मानसिक अद्वैतवाद के रूप में जाना जाता है; यह पदार्थ के अस्तित्व को नकारता है और इसे गौण महत्व तक सीमित कर देता है और मन को प्राथमिक वास्तविकता मानता है। पॉल ब्रंटन के अनुसार:

मन को संसार की तस्वीर से हटा दें और हम उसमें से स्थान और समय को हटा दें; हम इसका निचला भाग खटखटाते हैं। संसार कुछ मन के लिए अस्तित्व में है या फिर अस्तित्व में ही नहीं हो सकता। देखी गई प्रत्येक वस्तु के लिए एक द्रष्टा का अस्तित्व अवश्य होता है। दूसरे शब्दों में, जो कुछ भी जाना जाता है वह किसी मन द्वारा जाना जाता है।¹⁰

तटस्थ अद्वैतवाद के दर्शन के अनुसार, प्रकृति में जो कुछ भी मौजूद है वह न तो भौतिक है और न ही मानसिक बल्कि कुछ तटस्थ पदार्थ है जिससे भौतिक और मानसिक दोनों पदार्थ बनते हैं। प्रत्येक मनुष्य मन और शरीर नामक दो अलग-अलग पदार्थों से बना है। मन को एक पदार्थ के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसका कोई स्थानिक स्थान नहीं है। इसे विचारों, भावनाओं और इंद्रिय-अनुभवों का स्थान या केंद्र या स्वामी कहा जाता है। दूसरी ओर, शरीर सभी शारीरिक परिवर्तनों का केंद्र है।

मन की पहचान सिद्धांत

पहचान सिद्धांत या मन-मस्तिष्क पहचान सिद्धांत एक सिद्धांत है, जो दावा करता है कि मानसिक अवस्थाएं मस्तिष्क में होने वाली भौतिक घटनाओं के समान होती हैं। दूसरे शब्दों में मानसिक घटनाएँ मस्तिष्क में विशिष्ट शारीरिक घटना प्रकारों के समान होती हैं। यह नहीं माना जाता कि मन मस्तिष्क के समान है। मस्तिष्क और दिमाग की पहचान करना मन और मस्तिष्क की प्रक्रियाओं और स्थितियों की पहचान करने का मामला है। दर्द के अनुभव या किसी चीज़ को देखने या किसी मानसिक छवि पर विचार करें। पहचान सिद्धांत का प्रभाव यह है कि ये अनुभव केवल मस्तिष्क

प्रक्रियाएं हैं और केवल मस्तिष्क प्रक्रियाओं से संबंधित नहीं हैं।

मन अमूर्त है

प्लेटो पहले पश्चिमी दार्शनिक थे जिन्होंने घोषणा की कि मन एक अमूर्त इकाई है, जो शरीर से अलग और अलग है और इसके बिना अस्तित्व में रहने में सक्षम है। प्लेटो का मानना था कि मन (मानस) शरीर का प्रभारी है और उसकी गतिविधियों को निर्देशित करता है। प्लेटो भौतिक संस्थाओं और अभौतिक संस्थाओं दोनों के अस्तित्व में विश्वास करता था। द्वैतवाद का सबसे निश्चित कथन डेसकार्टेस के दर्शन में पाया जाता है, जिसके अनुसार मन और पदार्थ दो अलग और विशिष्ट प्रकार के पदार्थ हैं, जो अपनी प्रकृति में बिल्कुल विपरीत हैं और प्रत्येक दूसरे से पूरी तरह से स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में रहने में सक्षम हैं। डेसकार्टेस में मुख्य धारणा चेतना की प्रधानता थी, अर्थात्, मन स्वयं को किसी अन्य चीज़ की तुलना में अधिक तुरंत और सीधे जानता है। मन बाहरी दुनिया यानी पदार्थ को केवल संवेदना और धारणा के रूप में बाहरी दुनिया के प्रभावों के माध्यम से जानता है। डेसकार्टेस के लिए सभी दर्शन व्यक्तिगत मन से शुरू होते हैं और वह अपना पहला तर्क 'मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ' (कोगिटो एर्गो योग) शब्दों में देता है। कुछ दार्शनिक, जो मन को सारहीन मानते थे, द्वैतवादी दृष्टिकोण के पक्ष में नहीं थे क्योंकि यह मन और शरीर (पदार्थ) के बीच संबंधों को समझने में विभिन्न कठिनाइयों को जोड़ता है। ऐसे दार्शनिकों में से एक बर्कले थे जिनका मानना था कि जो कुछ भी अस्तित्व में है वह मानसिक है, जिन चीज़ों से सपने बनते हैं और भौतिक जैसी कोई चीज़ नहीं है। इस प्रकार के दृष्टिकोण के दो रूप हो सकते हैं। एक यह है कि वास्तविकता में एक विशाल सर्वव्यापी मन शामिल है और दूसरा यह है कि वास्तविकता में अनेक मन शामिल हैं। पहले दृष्टिकोण को निरपेक्ष आदर्शवाद कहा जाता है और बर्कले द्वारा रखे गए दूसरे दृष्टिकोण को व्यक्तिपरक आदर्शवाद कहा जाता है।

तटस्थ अद्वैतवाद

दूसरा दृष्टिकोण यह है कि न तो मानसिक और न ही शारीरिक वास्तव में मौलिक है। प्रत्येक किसी अंतर्निहित वास्तविकता का एक पहलू है जो न तो मानसिक है और न ही शारीरिक लेकिन उनके बीच तटस्थ है। तटस्थ तत्व मौजूद हैं, और मन उनके कुछ उपसमुच्चय द्वारा गठित होता है जिसे दुनिया में वस्तुओं के अनुभवजन्य अवलोकनों के एक सेट के रूप में भी देखा जा सकता है। वास्तव में, यह, भौतिक या मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार, तटस्थ तत्वों को एक या दूसरे तरीके से समूहीकृत करने का मामला है। ऐसे ही विचार रखने वाले एक दार्शनिक थे स्पिनोज़ा। उनके अनुसार, ईश्वर अंतर्निहित पदार्थ है, जो सारी वास्तविकता को समाहित करता है, और मानसिक और भौतिक केवल ईश्वर के गुण हैं। न तो मन भौतिक है और न ही पदार्थ मानसिक है। दो सत्ताएँ नहीं बल्कि

¹⁰ पॉल ब्रंटन, द हिडन टीचिंग बियाँन्ड योगा, पृष्ठ 265।

केवल एक ही हैं और वह सत्ता ईश्वर है और पदार्थ और मन इसके दो पहलू हैं जिनके माध्यम से यह स्वयं को प्रकट करता है। स्पिनोज़ा कहते हैं:

शरीर मन को सोचने के लिए निर्धारित नहीं कर सकता है, न ही मन शरीर को गति में रहने या आराम करने के लिए निर्धारित करता है क्योंकि मन का निर्णय और शरीर की इच्छा और दृढ़ संकल्प एक ही चीज हैं।

डेविड ह्यूम और ए.जे. अय्यर ने एक अलग दृष्टिकोण दिया है। उनके अनुसार, कई विशेष संस्थाएँ हैं जिन्हें वे 'अनुभव' कहते हैं। इनमें से कुछ अनुभव मन बनाते हैं जब वे कुछ निश्चित तरीकों से संबंधित होते हैं जैसे कि एसोसिएशन और स्मृति के नियमों द्वारा और कुछ शरीर बनाते हैं जब इकाइयाँ अन्य तरीकों से संबंधित होती हैं जैसे कि धारणा के नियम। इसलिए मन को केवल व्यक्ति के अनुभवों का संग्रह माना जाता है और एक भौतिक वस्तु केवल उन अनुभवों का संग्रह है जो एक व्यक्ति उससे प्राप्त कर सकता है।

निष्कर्ष

हम कह सकते हैं कि मन मनुष्य का एक अभिन्न अंग होने के कारण मानव व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसे भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन में विभिन्न विचारधाराओं द्वारा विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया गया है। चूंकि भारतीय दर्शन का मुख्य जोर व्यक्ति की अंतरतम गहराई के भीतर परम वास्तविकता की प्राप्ति पर रहा है, इसलिए मानसिक संशोधनों की प्रकृति को समझने और उनकी समाप्ति के तरीकों की सिफारिश करके इसे संभव बनाने का प्रयास किया जाता है।

संदर्भ

1. एन.सी. पांडा, माइंड एंड सुपर माइंड, डी.के. प्रिंट वर्ल्ड प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली – 110 015, पेज VIII.
2. जे.जे. शॉ, दर्शन और विज्ञान-संपादित, रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ कल्चर, गोल पार्क, कोलकाता – 700 029, पेज 247.
3. गिल्बर्ट राइल, द कॉन्सेप्ट ऑफ माइंड, पेंगुइन बुक्स, पेज 17.
4. दि ऑक्सफोर्ड कंपेनियन टू द माइंड, संपादित-रिचर्ड एल ग्रिगोरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1987, पेज 312
5. दर्शन और विज्ञान तथा चेतना के प्रति खोजपूर्ण दृष्टिकोण, संपादित-रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ कल्चर, गोल पार्क, कोलकाता 700 29, पेज 252.
6. प्रभानंद (2003) वैदिक धर्म और दर्शन, श्री रामकृष्ण मठ, मायलापुर, चेन्नई, पेज 17. 62
7. सत्प्रकाशानंद (2003) माइंड अकॉर्डिंग टू वेदांता, श्री रामकृष्ण मठ, मायलापुर, चेन्नई। पृष्ठ 3

8. हैंडबुक ऑफ इंडियन साइकोलॉजी, संपादित-के. रामकृष्ण राव, आनंद सी. परांजपे, अजीत के. दलाल, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस इंडियन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली – 110 002, पृष्ठ 261
9. एस. राधाकृष्णन, इंडियन फिलॉसफी, खंड 1, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली-110 001। पृष्ठ XII
10. एस.एन. दास गुप्ता, हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशंस, प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ 12
11. स्वामिनी आत्मप्रज्ञानंद सरस्वती, वेदों का नामकरण, डी.के. प्रिंट वर्ल्ड प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली – 110 015, पृष्ठ 12
12. के.वी. वेंकटेश्वर राव, निबंध उपनिषद् और आधुनिकता से उनकी प्रासंगिकता, वेद समाज आधुनिकता, संपादित, कदवल्लूर अन्योन्या परिषद् प्रकाशन, पृष्ठ 157.
13. राधाकृष्णन एस, भारतीय दर्शन, खंड 1, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, पृष्ठ 110.
14. ब्लूम फील्ड, वेद का धर्म, पृष्ठ 51, भारतीय दर्शन, खंड 1, पृष्ठ 107 में उद्धृत. श्री.अरविंद, भारतीय संस्कृति की नींव, श्री.अरविंद आश्रम पांडिचेरी, पृष्ठ 269.

Corresponding Author

Santosh Prajapati*

Research Scholar, Shri Krishna University, Chhatrapur, M.P. India

Email: santoshprajapati101@gmail.com